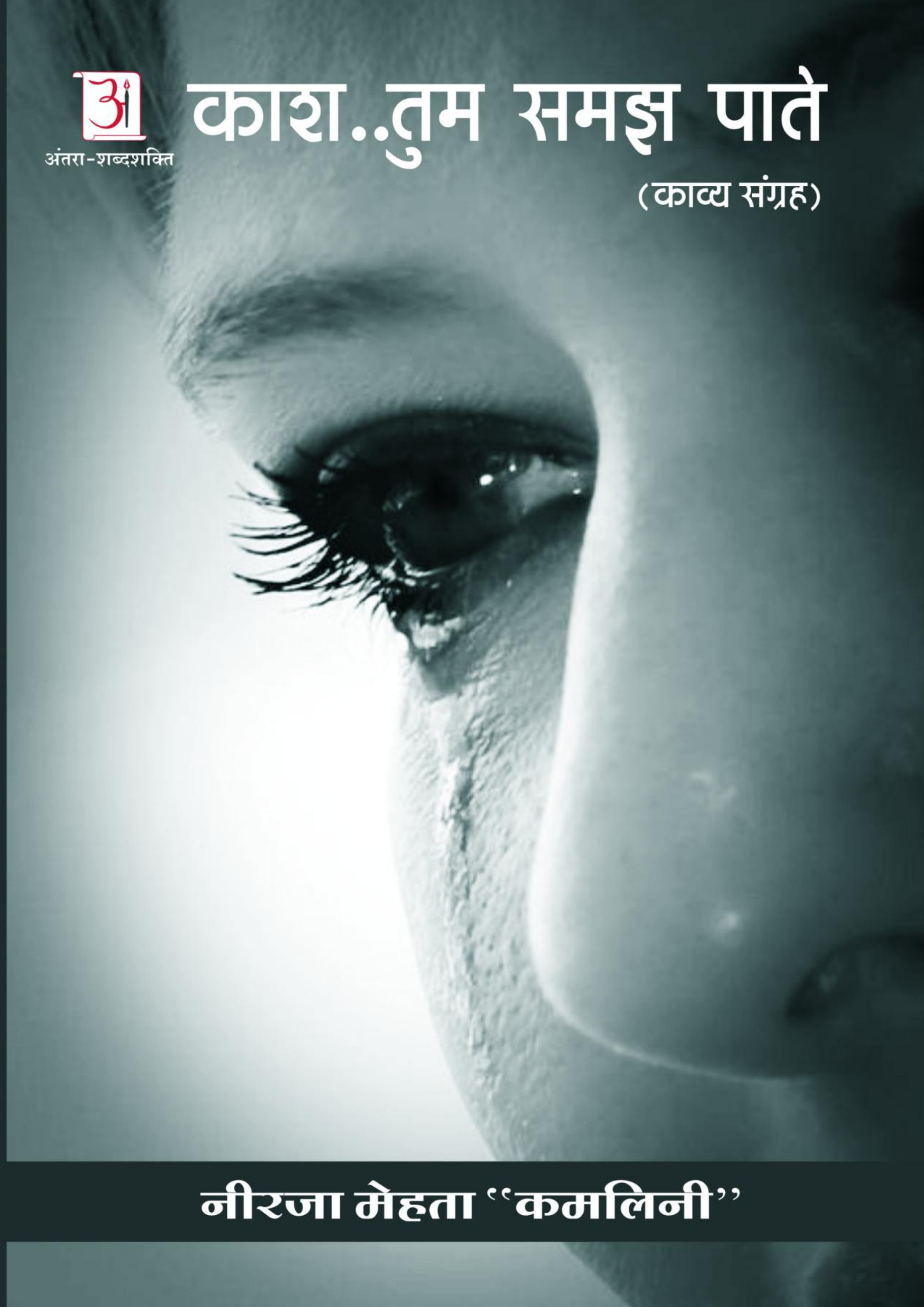

अंतरा-शब्दशक्ति

काश..तुम समझ पाते

(काव्य संग्रह)

नीरजा मेहता ''कमलिनी''

काश! तुम समझ पाते

(काव्य संग्रह)

नीरजा मेहता 'कमलिनी'

अन्तरा शब्द शक्ति प्रकाशन
इंदौर,मध्यप्रदेश

ISBN- 978-81-937811-6-6

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
कार्यालयनेहरु चौक वारासिवनी १५ :,जिला बालाघाट ४८१३३१ (म.प्र)
शाखा२०७-एस :, नवीन भवन, इंदौर प्रेस क्लब परिसर, इंदौर ४५२००१ (.म.प्र)
दूरभाष९४२४७६५२५९ मो २५३१५९-०७६३३ (कार्या) :
अणुडाक -antrashabshakti@gmail.com
अंतरताना- www.antrashabdshakti.com

प्रथम संस्करण २०१८ ©नीरजा मेहता कमलिनी
मूल्य: ४०.०० रुपये
आवरण चित्र : संदीप सोनी, वारासिवनी
मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी

'Kash Tum Samajh Pate' by 'Neerja Mehta 'Kamlini'

वैधानिक चेतावनी : इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है | लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकापी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम से अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुरुत्पार्दित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता हैं |प्रस्तृत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा शब्द शक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई हैं | अत :प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु प्रत्येक लेखक जिम्मेदार हैं| प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र ,भाषाशैली एवं स्थान सभी लखक की कल्पना हैं | किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं हैं|

काश तुम समझ पाते

प्रिय पाठकों,

मानव रूप में जन्म लेते ही, बालक के जीवन में कितने ही रिश्ते जुड़ जाते हैं। और जैसे-जैसे बालक बड़ा होता है उन रिश्तों को समझने लगता है, पहचानने लगता है। धीरे-धीरे उन रिश्तों से उसको एक उम्मीद बँधने लगती है। वो चाहता है कि सब उसको समझें, उसकी भावनाओं का आदर करें। क्या ये उम्मीद ग़लत है ? नहीं, क्योंकि जब रिश्ते जुड़ते हैं तो यह आस एक विश्वास बन जाता है।

जीवन में आगे बढ़ते हुए एक समय ऐसा आता है जब व्यक्ति एक अन्य पवित्र रिश्ते में बँध जाता है। ये रिश्ता है पति-पत्नी का जो अन्य तमाम रिश्तों से बढ़कर सबसे क़रीब होता है क्योंकि पति-पत्नी परस्पर एक दूसरे को जितना बाह्य रूप से समझते हैं उतना ही आंतरिक रूप से भी जान जाते हैं और ये माना जाता है कि माता-पिता के बाद यदि कोई मज़बूत संबंध है तो वो है पति-पत्नी का। हाँ, ये भी सच है कि दोनों के बीच तक़रार भी होती है, अहम भी टकराते हैं किंतु फिर भी उनके मध्य एक ऐसी मज़बूत कड़ी होती है जो दोनों को जोड़े रहती है।

विवाह जैसे पाक़ रिश्ते की गरिमा तभी तक बनी रहती है जब तक पति-पत्नी एक दूसरे के मान-सम्मान का ख़्याल रखते हैं और परस्पर एक-दूसरे की भावनाओं को समझते हैं। यदि जीवन में ऐसा समय आ जाये जब दोनों एक-दूसरे को समझना ही न चाहें, भावनाओं को नज़रअंदाज़ करें तो सोचिये दिल को कितनी ठेस पहुँचेगी, इसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। ऐसे में कई बार परिवार टूट तक जाते हैं।

स्त्रियाँ बहुत ही संवेदनशील होती हैं और शायद ये उनके स्वभाव में होता है कि वो हर बार मौन ही रह जाती हैं और अपनी बात कहने में संकोच कर जाती हैं और शायद इसीलिए पुरुष कई बार स्त्री को समझ नहीं पाते। एक स्त्री होने के नाते मैं नारी मन भली-भांति समझ सकती हूँ और इसीलिए इस पुस्तक में मैंने नारी मन के भावों को संप्रेषित किया है और कविताओं के द्वारा हर पत्नी के मन की बात उन पतियों तक पहुँचाने का प्रयास किया है जो अपनी पत्नी को समझ नहीं पाते और हर उस नारी की ये आवाज़ उन तक पहुँचाई है---"काश तुम समझ पाते"।

आपके स्नेह व आशीर्वाद की आकांक्षिणी
नीरजा मेहता 'कमलिनी'

अनुक्रमणिका

1. काश तुम समझ पाते 5

2. परिधि 6

3. एक चक्रव्यूह ऐसा 7

4. अधूरा स्पर्श 8

5. खाली फ्रेम 9

6. मैं तरु सी जीवनदायिनी 10

7. हाँ, मैंने दिया है माँ को जन्म 11

8. पीहर 12

9. सुखद अनुभूति 13

10. रजस्वला से रजोनिवृत्ति 14

काश, तुम समझ पाते

काश, तुम समझ पाते
सूखे आटे में
जल की बूँदों का मिश्रण,
उबली दाल में
लाल मिर्च का तड़का,
चाय में
शक्कर की मिठास,
खीर में
केसर की रंगत,
सब्ज़ी में
गर्म मसाले की खुशबू।

काश, तुम समझ पाते
मैं सूखी लोई नहीं
मुझमें प्यार की नमी है,
मैं कच्ची दाल नहीं
मुझमें परिपक्वता है,
मैं फीकी चाय नहीं
मैं दे सकती हूँ सुकून,
मैं रंगहीन नहीं
मुझमें घुल सकता है हर रंग
और जीवन के हर रूप में
मैं भर सकती हूँ सुगन्ध।

काश, तुम समझ पाते
काश ये मिश्रण
मुझ संग कर पाते,
कुछ प्रेम का तड़का
लगा पाते,
अपने कर्कश बोल में
मिठास भर पाते,
मेरे रुख़ पर
अपनी रंगत चढ़ा पाते,
मेरे तन पर
अपनी खुशबू बिखेर पाते।

काश, तुम समझ पाते
मैंने तुमको किया है
स्वयं में निहित,
किया है तुमको आत्मसात,
रमा है तुमको अंतर्मन में,
चढ़ाई है प्रेम की रंगत
और
खुद को समर्पित कर
किया है तुमको सुवासित,
काश तुम समझ पाते
हाँ, काश तुम समझ पाते।

परिधि

बँधी रहती हूँ
तुम्हारे विचारों की परिधि में,
उठते बैठते सिर्फ तुम
हाँ, सिर्फ तुम ही
मेरी परिधि में रहते हो,
खाली पन्नों पर शब्दों का गणित
मेरा प्रेम उकेरने को आतुर रहता है
और शायद तुम भी
यही चाहते हो कि मैं
चीख-चीख कर
अपने प्रेम का सुबूत दूँ,
किन्तु तुमको मैं दुनिया से
छुपा कर रखना चाहती हूँ,
मैं डरती हूँ कोई तुमको छीन न ले,
कहीं किसी की बुरी नज़र न लगे,
विनती है मत परखो मुझे
शब्दों के मापदण्डों पर,
मत करो ये उपहास
मेरी कल्पनाओं का,
मेरे भावों को रहने दो अंतर्मन में,
ये देते हैं मुझे सुकून,
काश तुम समझ पाते
नहीं जतलाना चाहती संसार को
मेरी प्रेम परिधि अनंत से परे है।

एक चक्रव्यूह ऐसा

यौवनावस्था में
जीने की लालसा लिए
जिस अदम्य शक्ति व हौसले के
साथ
मैं जीवन रुपी चक्रव्यूह में कूदी,
उस व्यूह में
मुझे परतंत्रता का आभास हुआ,
सदैव मुँह ढाँप मिला
खामोश रुदन
घुटते अरमान
सिसकते पहलू
बंद ज़ुबान।

कुछ अंतराल बाद मुझे लगा
बहुत हुआ अब और नहीं,
जिस हिम्मत व हौसले की
कमी अंतस में समा गयी थी
उसको मिली जीने की नयी वजह,
यही सोच निकल पड़ी
तोड़ के समस्त बंधन,
जान गयी
चक्रव्यूह में रहकर जीना,
खामोश सिसकियाँ नहीं
चक्रव्यूह में अब
गूँजती हैं मेरी आवाज़ें।

जीवन के ढलते पड़ाव में
अंतिम क्षणों में याद आया
मुझे वही चक्रव्यूह,
लौटने की चाह लिए
अपनों के बीच वापसी की सोच से
हुई सुख की अनुभूति,
अपनी गलती का एहसास हुआ
और ग्लानि पश्चाताप से
भर गया मन,
लौट आई मैं
चेहरे पर सुकून भरा आनंद लिए
मानो उसी व्यूह में पाया मैंने
नवजीवन,
काश तुम समझ पाते
मेरे लौटने का सबब
और यूँ आँखें न तरेरते,
जानते हो, अब वही बंधन
मुझे सुख का
अहसास करा रहा है,
इसी व्यूह में
मेरे जीवन की पूँजी समायी है
मेरे अपने समाये हैं,
जान गयी हूँ
जो सुख इसकी गोद में
चैन से मरने में है
वो सुख बंधनमुक्त जीने में कहाँ ?

अधूरा स्पर्श

जीवन के अधूरे पलों में भी
मैंने ज़िन्दगी को
पूर्णरूपेण जिया।
तुम हर क्षण मुझे स्वयं में
समाहित से लगे।

कोमल त्वचा पर
तुम्हारा गर्माहट भरा
कठोर व दृढ़ स्पर्श
भले ही अधूरा रहा,
भले ही मैं पूर्ण स्पर्श से अनभिज्ञ रही,
किन्तु तुम्हारे शब्दों के
तीखे व्यंग्य बाणों का,

तुम्हारे रौद्र रूप को
अपनी आँखों में उतारने का,
तुम्हारे शरीर के रस की दुर्गंध को
अपने मन में बसाने का,
स्पर्श अधूरा नहीं रहा।

ज़िन्दगी तुम्हारे स्नेह के
अधूरे स्पर्श से कितनी भी दुरूह थी
पर काश तुम समझ पाते
कि कहीं न कहीं
तुम्हारे होने के एहसास ने
मेरे मन को स्पर्श किया है।

खाली फ्रेम

तुम्हारे इंतज़ार में
बोझिल पलकें लिए
रोज़ खड़ी हो जाती हूँ
दीवार पर टंगी
तुम्हारी तस्वीर के सामने,
जानती हूँ नहीं बोलोगे तुम
फीकी मुस्कान लिए
बस एकटक देखते रहोगे,
काश तुम समझ पाते
तुम्हारी तस्वीर से बात करना
मुझे अच्छा लगता है
और रोज़ ये कहना अच्छा लगता है
लौट आओ ना।

याद है मुझे
कंपकंपाती उंगलियों से
मेरा हाथ अपने हाथों में ले,
आंखों की कोरों से
टपकते अश्क़ों को
रोकने की नाकाम क़ोशिश करते हुए,
रुदन भरे थरथराते होठों से
तुम बहुत कुछ कहना चाहते थे
पर इतना ही कह पाये
न छोड़ कर जाओगे कभी।

तुम भी जानते थे, मैं भी जानती थी
ये आँसू सच्चे हैं
कम्पन कुछ क्षण की है
पर ये वादा झूठा है,
वक़्त नहीं ठहरा और तुम चले गए।

काश तुमको बता पाती
नहीं भूल पाऊँगी
मृदु कोमल हास, चन्द्रिका द्युति
समुन्दर तट वीचि
प्रेमपूर्ण स्पर्श, सोलह श्रृंगार
कर्णप्रिय स्वर
रूठना मनाना
और सांसों का टकराना।

मंज़िलें और भी हैं
पर वादा है तुमसे
इन पलों को
आँखों में रोक लूँगी
इन यादों को
मन में सहेज लूँगी
और दीवार पर टँगी
तुम्हारी तस्वीर के बगल में
जो खाली फ्रेम है न
उसमें मैं ही आऊँगी
हाँ, उसमें मैं ही आऊँगी।

मैं तरु सी जीवनदायिनी

मैं एक नारी
तरु सी जीवनदायिनी
अवनि की गर्विता।
हम दोनों में समानता
वृक्ष काटे तो
प्रकृति में परिवर्तन
पर्यावरण भी दूषित,
मानव की जन्मदात्री
के कन्या बीज को रौंदा
तो होगा समापन पीढ़ियों का।

मुझे लेने दो खुली हवा में श्वास
मैं ही सृष्टि की रचयिता
मैं ही भू की अस्मिता
मुझसे ही शोभित नर
मुझसे ही विकसित होती
परिवार की बेल,
न होगी नारी तो न होगा नर
कैसे होगा वितान
यदि मसला कन्या बीज।

मैं पादप के बीज सी
वृक्ष का प्रतिरूप,
टहनियों शाखाओं सी
वंश को बढ़ाती,
तने सी मज़बूत मैं
परिवार को संभालती,
पुष्प पत्र फल सी मैं

प्रेम स्नेह ममता से सींचती,
आँधी तूफानों जैसी
कठिनाईयों में
मैं ढाल बन जाती,
थके राही के
वृक्ष की छांव सी
पीड़ा में मैं छाया बन जाती।

मैं कन्या रूप में जन्मी
सेवा सुख प्यार
देने आई,
काश तुम समझ पाते
मुझे बसन्त सा है खिलना
सावन सा हरीतिमा होना
रजनीगंधा सा महकना,

संभालो, बचाओ
मत काटो मेरी जड़
दोनों हथेलियों का
दे दो सहारा
अन्यथा होगा पतझड़
क्योंकि मैं हूँ
तरु सी जीवनदायिनी।

हाँ, मैंने दिया है एक जन्म माँ को

कैसे भूल सकती हूँ
जब पहली बार
मैंने उसे गोद में लिया था
मैं निहाल हो गयी थी,
छोटा सा चाँद सा गोल चेहरा
मानो अमावस में चाँद खिला हो,
गुलाब की पंखड़ियों सी
मखमली गुलाबी त्वचा,
रुई जैसे कोमल कपोल,
चित्रकार सदृश
पतली-पतली लंबी अंगुलियों के
लंबे नाख़ून,
मीलों आगे बढ़ने के लिए
नन्हे-नन्हे गुदगुदे पैर,
परी जैसे रेशम से सुनहरे बाल,
दुनिया को देखने को आतुर
कभी खुलती तो कभी
तेज़ रोशनी से चौंधियाती आँखें,
बन्द मुट्ठियों में अपना भविष्य
लिए
वो नन्ही सी जान
जब कसमसाकर
मुझमें अपनी सुरक्षा ढूँढती
अमृत पान की आशा लिए
मेरे आँचल में अपना मुँह छुपाती,
मैं सब कुछ भूलकर
उसे अपनी छाती में भींच लेती।
काश तुम समझ पाते
बेटी की माँ होने का एहसास,
मेरी भावनाओं को अनदेखा कर
तुम पुत्र कामना से व्याकुल न होते,
क्यों नहीं समझ पाये
वो पल जब मैं माँ बनी थी
मुझमें समाया था एक
ज़िम्मेदारी का एहसास,
आश्चर्यचकित हो जाती
मुझे वो माँ कहकर पुकारेगी,
रोमांचित हो जाती
मेरे जिस्म का अंश है वो,
गर्वित हो जाती कि
एक बेटी की माँ हूँ मैं,
उस प्रथम मातृत्व को पाकर
मैं भूल गयी थी प्रसव वेदना,
और तुमने मेरे मातृत्व सुख से
मुँह फेर लिया था,
शायद तुमको ये एहसास
दिलाने में नाकामयाब रही
कि मैं नर की जन्मदात्री को
संसार में लाई हूँ,
वो आज बेटी के रूप में
गोद में आई है,
जो एक माँ है, एक भावी माँ
काश तुम समझ पाते
मैंने दिया है जन्म एक माँ को

हाँ, मैंने दिया है जन्म एक माँ को

पीहर

काश तुम समझ पाते
एक स्त्री के लिए
पीहर भुलाना सरल नहीं
वहाँ से जुड़ी तमाम यादें
मेरी जागीर हैं,
मानती हूँ ससुराल आकर
मैंने बहुत कुछ पाया
यहीं आकर जीवन का मर्म समझा
यहीं आकर तुम्हारा साथ पाया,
यहीं सीखा मैंने कैसे बनती है रसोई
कैसे निभाये जाते हैं रिश्ते
कुछ घर-गृहस्थी के गुण
कुछ संस्कार कुछ धर्म,
यहीं पाया मैंने माँ बनने का सुख
यहीं मिला मुझे गृहस्वामिनी का
हक़,
यहीं लिये मैंने कुछ अहम फैसले
यहीं से खुले कुछ नये रास्ते।

काश तुम समझ पाते
एक बार वही पगडंडी दिखा लाते
जहाँ सहेलियों से होती थी मीठी
तक़रार
और कुछ ही पल में हो जाता था
दोस्ती का इज़हार,
चाहे उम्र भले ही हो पचपन की
पर कहाँ भूलती हैं यादें बचपन की,
वो भाई बहन से झूठमूठ का झगड़ा
माँ की प्यार भरी झिड़की
और पिता से हमारा डरना।

काश तुम समझ पाते मेरे मन का
हाल
छोड़ कर आई थी माता-पिता का
प्यार,
यूँ मत लो मेरी परीक्षा न खरी उतर
पाऊँगी
समझो मेरे एहसास, न छोड़ उन्हें
पाऊँगी,
पीहर होता है हर बेटी की कमज़ोरी
नहीं सुन सकती खिलाफ़ उनके
बोली,
आज चाहती हूँ मैं फिर से पीछे
मुड़ना
चाहती हूँ एक बार फिर से खुलकर
जीना,
एक बार दूर होकर देखो तुम घर से
जान जाओगे जो चाहती हूँ कहना
और शायद तभी समझ पाओगे
पीहर से यूँ मेरे मन का जुड़ना
हाँ, पीहर से यूँ मेरे मन का जुड़ना।

सुखद अनुभूति

मंत्रमुग्ध हूँ मैं
सोलह श्रृंगार जो किया है,
माथे की चमकती बिंदिया
केशों में वेणी की सुवास
आभूषणों की स्वर्णिम आभा
पायल की छन्न-छन्न
चूड़ी की खन-खन,
चुनरी ओढ़ के
स्वयं को दर्पण में निहारा,
गुलाब की पंखुड़ी से रक्त होंठ
कुछ कहने को हुए आतुर
किन्तु स्वयं की छवि में
दिखने लगी
प्रियतम तुम्हारी छवि,
एक सुखद अनुभूति
के एहसास मात्र से
हया से पलकें
कभी उठतीं, कभी गिरतीं
शर्म से रक्तिम हुए कपोल,
मानों बिन कुछ कहे ही
कानों में मिश्री सी घुल गयी हो,
क्या तुम समझ पाओगे
ये सिर्फ तुम्हारे क़रीब होने के
एहसास मात्र की सुखद अनूभूति है।

रजस्वला से रजोनिवृत्ति

याद है जब पहली बार रजस्वला हुई थी
हैरान सी, घबराई सी
एक अनजाने भय से
माँ से चिपटी हुई थी,
नहीं जानती थी
ये हर माह पंचदिवसीय होगा
न चाहते हुए भी मुझे सहना होगा,
बाहर जाती तो मुड़-मुड़ कर देखती
कहीं दाग़ न लग जाये चिंतित रहती,
डरती थी राह की उन घूरती आँखों से
भय से सिकुड़ जाती थी
मजनुओं की फब्तियों से,
सिसकियाँ भरती थी उम्र जो छोटी थी
शरीर भरने लगा पर मन से बच्ची थी,
माँ ने मुझे समझा और पास बैठा समझाया
आँसू पोंछ कर मेरे, प्यार से ढाढस बँधाया,
बोलीं, तुमको भी मेरी तरह है माँ बनना
इस मासिक चक्र से गुज़रना
क्योंकि यही स्त्रीत्व की पहचान है
इसीलिए बिन घबराये इसका सामना है करना।

समय बीतने लगा, मैं युवती बन गयी
अब मुझे इसकी आदत हो गयी,
पेट और पैरों की पीड़ा अनदेखा करने लगी
और हर महीने इसका इंतज़ार करने लगी,
अब मैं पीछे मुड़-मुड़ कर नहीं देखती
बल्कि नव विकसित कलियों का ध्यान रखती,

विवाह हुआ, दिन चढ़ गए
नौ महीने इंतज़ार में गुज़र गए,
इसी मासिक के कारण मैं माँ बन पाई
भूल गयी सब कष्ट, माँ की संज्ञा जो थी पाई।

पचास बसन्त जब किए पूरे
न रही रजस्वला
मानों ज़िन्दगी के लम्हे रह गए अधूरे,
उम्र बढ़ने का आभास हो गया
अंतर्मन में कुछ चटक गया,
मन ही मन कुछ रिक्त सा एहसास हुआ
शायद चिड़चिड़ापन मुझमें भर गया,
कभी घबराहट से हो जाता बुरा हाल
कभी ठंड में भी पसीने से हो जाती बेहाल,
कुछ अजीब सी हो गयी हालत थी
पर मुझे समझने के लिए अब माँ न थी।

मेरे प्रियतम,
जब ब्याह कर आई थी
तुमने तब भी मेरा कष्ट न समझा,
मिन्नतें करती थी
आज नहीं, मैं हूँ रजस्वला,
पर तुम देह के नशे में चूर
बिन मेरी पीड़ा समझे
अपनी मर्दानगी में रहते गुरूर,
अपने हक़ की दे सदा दुहाई
बरसों तुमने अपनी प्यास बुझाई,
काश तुम समझ पाते
एक बार मेरा कष्ट देख पाते,

मैं बिन कुछ कहे खुद को कर देती समर्पित
मैंने तो तुमको अपना ख़ुदा मान कर
किया था अपना तन मन अर्पित।

मेरे प्रियतम,
आज तुम्हारा भी है ढलता पड़ाव
और मेरी भी है रजोनिवृत्ति,
कैसे बताऊँ,
जितना कष्टकारी था पहला मासिक
हालत कुछ अजीब ही है
रजोनिवृति से मानसिक,
आज लग रहा स्त्रीत्व कहीं खो गया
ये सोच-सोच मन आज रो गया,
तब दिया था माँ ने सहारा
आज मांग रही कांधा तुम्हारा,
काश तुम समझ पाते
मेरा हाथ अपने हाथ में ले
कहानी मेरी समझ पाते,
मैं नारी हूँ, कुछ अलग है तुमसे स्थिति
क्या समझ पाओगे
रजस्वला से रजोनिवृत्ति
हाँ, रजस्वला से रजोनिवृत्ति।

****

व्यक्तित्व दर्पण

नाम - नीरजा मेहता 'कमलिनी'
जन्मतिथि - 24 दिसम्बर 1956
शैक्षिक योग्यता - एम.ए. (हिन्दी व संस्कृत), बी.एड., एल.एल.बी.
निवास स्थान - कौशम्बी गाज़ियाबाद (यू.पी.)
फोन नं. - 9654258770
मेल आई.डी. - mehta.neerja24@gmail.com
विधा - छंदमुक्त, गीत, मुक्तक, हाइकू, कहानी, लघुकथा, संस्मरण, लेख आदि

प्रकाशित एकल पुस्तकें
(1) मन दर्पण (कविताएँ समीक्षा सहित) 2016
(2) नीरजा का आत्ममंथन (काव्य संग्रह) 2016
(3) उमंग (बाल काव्य संग्रह) 2017
(4) परछाइयाँ (संस्मरण) 2017
(5) सृजन समीक्षा (कविताएँ समीक्षा सहित) 2018
(6) ओस सी ज़िन्दगी (काव्य संग्रह) 2018
(7) हाँ, मैं ऐसी ही हूँ
(8) खनक चूड़ियों की (काव्य संग्रह) 2018
(9) एक टुकड़ा धूप

प्रकाशित साक्षा संग्रह
(1) 35 साझा काव्य संग्रह (2) 4 साझा कहानी संग्रह (3) 2 साझा लघु कथा संग्रह
(4) 1 साझा लेख संग्रह (5) 1 साझा समीक्षा संग्रह (6) 2 परिचय संग्रह

पत्र पत्रिकाएं - 2008 से अब तक देश विदेश की अनेक पत्र-पत्रिकाओं व ई-पत्रिकाओं में लगभग 500 से अधिक रचनाएं प्रकाशित हो चुकी हैं और निरन्तर प्रकाशित होती रहती है।

सम्मान - साहित्य के क्षेत्र में योगदान के लिए विभिन्न संस्थाओं/समूहों द्वारा 2015 से अब तक लगभग 50 बार प्रशस्ति पत्र व स्मृति चिन्ह से सम्मानित।

जीवन का उद्देश्य - कड़ी मेहनत, सच्ची लगन औन अनुशासन ही मेरी पूँजी है, साहित्य सेवा ही मेरा सपना है और सादगी ही मेरा जीवन है।

न छीन पाआगे कभी, बेवजह ये पहल है
ये ईटों का नहीं, मेरे ख़्वाबों का महल है।

अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com

१५, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी,
जि. बालाघाट (म.प्र.) पिन ४८१३३१,
संपर्क- ९४२४७६५२५९,
अणुडाक: antrashabdshakti@gmail.com

978-81-937811-6-6

मूल्य- 40/-